International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(4): 08-11

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(4): 08-11
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-05-2018
Accepted: 04-06-2018

सुमन मिश्रा
प्रोफेसर संहिता संस्कृत सिद्धान्त
विभाग ऋषिकुल परिसर उत्तराखण्ड
आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय, हरिद्वार,
हरिद्वार, भारत

**Correspondence**
सुमन मिश्रा
प्रोफेसर संहिता संस्कृत सिद्धान्त
विभाग ऋषिकुल परिसर उत्तराखण्ड
आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय, हरिद्वार,
हरिद्वार, भारत

# संस्कृत वाङ्मय में वर्णित–आयुर्वेद की उपयोगिता

सुमन मिश्रा

**प्रस्तावना**

सर्वप्रथम संस्कृत वाङ्मय से क्या तात्पर्य है? ये जान लेना अति आवश्यक है। सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु में 'क्त' प्रत्यय के योग से संस्कृत शब्द सिद्ध होता है। इसका अर्थ शुद्ध अथवा परिष्कृत है। जिस प्रकार लोक में किसी अशुद्ध अथवा अपरिष्कृत वस्तु की तुलना में कोई शुद्ध वस्तु परिष्कृत अथवा संस्कृत कही जाती है उसी प्रकार भाषा संसार में भी अशुद्ध रूप में प्रतीत होने वाली ग्रामीण भाषाओं की तुलना में जो भाषा अधिक शुद्ध थी उसी के लिये लोगों ने संस्कृत शब्द का व्यवहार किया था। भारत में बोली जाने वाली ऐसी भाषा जो विश्व की प्राचीनतम भाषा है। इसी भाषा में विश्व वाङ्मय के गौरवरूप वेद आदि ग्रंथ विराजमान हैं।

संस्कृत भाषा के दो रूप हैं– वैदिक और लौकिक।

**वैदिक रूपः** संस्कृत का वैदिक रूप संस्कृत भाषा की प्राचीनतम आकृति को धारण करता है। उसके इसी रूप में समस्त वैदिक वाङ्मय विराजमान हैं।

**लौकिक रूपः** इसका लौकिक रूप इसके वैदिक रूप की अपेक्षा अधिक परवर्ती है। इसके इसी रूप में रामायण से लेकर आधुनिक संस्कृत साहित्य तक का समस्त कलात्मक और शास्त्रीय साहित्य इसमें निहित है। यह रूप पाणिनि मुनि के द्वारा नियन्त्रित है, इसीलिये इसमें भाषागत परिवर्तन दृष्टिगत नहीं होता किन्तु वैदिक भाषा की अपेक्षा इसमें अन्य भाषाओं के शब्द अधिक पाये जाते हैं। संस्कृत वाङ्गमय समस्त भारत वर्ष का प्रतिनिधित्व करता है उसके किसी प्रान्त, जाति अथवा वर्ग को नहीं।

1. यह अत्यन्त प्राचीन होता हुआ भी आधुनिक है।
2. प्राचीनतम काल से लेकर आज तक यह कभी भी विच्छिन्न नहीं हुआ है।
3. यह वाङ्मय सदैव अपने काल का प्रतिबिम्ब रहा है।
4. चित्रित भावों और विचारों की दृष्टि से भी यह वाङ्मय अन्य वाङ्गमयों से आगे रहा है।
5. केवल भारतीय ही नहीं अपितु आदिम मानव जाति की प्राचीनतम स्थिति का परिज्ञान इसी वाङ्मय के एक अंग ऋग्वेद के द्वारा होता है।
6. इसके काव्यों एवं नाटकों में भी जो चारूता दृष्टिगोचर होती है वह अन्यत्र नहीं दिखायी देती। इस वाङ्मय में मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से संबंध रखने वाले ग्रंथ रचे गये हैं केवल इतना ही नहीं मानव जाति के स्वास्थ्य से संबंधित इसी वाङ्मय के एक अंग वेदों में आयुर्वेद शास्त्र की उपयोगिता को दर्शाया गया है।

**(1) वेदों में आयुर्वेदः** वेदों ने ज्ञान के दो भाग किये– (1) अविद्या (2) विधा

विद्यां चाडविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाडमृतश्नुते।।

अर्थात जो मनुष्य विद्या और अविद्या को साथ ही जानता है वह अविद्या से मृत्यु को तर करके विद्या से मोक्ष को प्राप्त होता है।

इस मंत्र में ज्ञान के पहले भाग अविद्या में समस्त आधुनिक– भौतिक, रसायन, जीव, वनस्पति, अभियांत्रिकी एवं तकनीकी तथा आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान का समावेश हो जाता है।

**दूसरे भागः** विद्या में दर्शन, अध्यात्म, वेदान्त आदि का समावेश हो जाता है।

यहां पर मैं संस्कृत वाड्.मय में आयुर्वेद की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए यह बता रही हूं कि ज्ञान के पहले भाग अविद्या जिसके अन्तर्गत आयुर्वेद चिकित्सा आती है। वेदों में मंत्रों में देवता वाद है प्रत्येक सूक्त का कोई देवता होता है इस प्रकार अग्नि, जल आदि देवताओं के समान रूद्र, इन्द्र भी देवता हैं उनके साथ ही अश्विनौ भी देवता हैं जो स्वर्ग के वैद्य माने जाते हैं। काय चिकित्सा तथा शल्य चिकित्सा दोनों में पारडंगत थे क्योंकि आयुर्वेद के आठ अंगो में ये दो अंग प्रधान हैं। इन दो अंगो में पारडगत व्यक्ति को अश्विनौ की उपाधि प्रदान की जाती है। चिकित्सा कार्य का संबंध केवल अश्विनी कुमारों से ही है। ये देवताओं के चिकित्सक होने से सूक्तों के देवता माने जाते हैं।

**(2) ऋग्वेद में आयुर्वेदः** यद्यपि अन्य वेदों में भी आयुर्वेद का वर्णन है तथापि ऋग्वेद सबसे प्रथम माना जाता है इसमें प्राकृतिक वस्तुओं से स्वास्थ्य प्राप्ति का निर्देशन मिलता है परन्तु औषधियों में वनस्पतियों का ही उल्लेख है। ऋग्वेद में आयुर्वेद के ऐसे आचार्य मुख्यतः दिवोदास और भारद्वाज हैं। इन्हीं से शल्य और काय चिकित्सा का प्रचार पृथ्वी पर हुआ, लोहे की टांग जोड़ने का उल्लेख भी ऋग्वेद में मिलता है।

चरित्रं वारिवाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितक्यायाम्
सद्योजधामायसी विषपलायै धनहिते षर्तवे प्रत्यधत्तम।।
ऋ 1/176/15

अर्थात
इस मन्त्र में एक सेवक अश्विनी कुमारों से प्रार्थना करता है कि मेरे स्वामी की पत्नि की टांग टूट गयी है लोहे की टांग लगा दीजिये। ऋग्वेद में च्यवन ऋषि को पुनः युवा बनाने का उल्लेख है। इसके अविस्क्ति ऋग्वेद में काय चिकित्सा, प्रसूति चिकित्सा, सूर्य किरणों द्वारा चिकित्सा वायु चिकित्सा, मानस चिकित्सा आदि चिकित्साओं का वर्णन मिलता है।

**(3) यजुर्वेद में आयुर्वेदः** यजुर्वेद के दो भाग हैं।
(1) तैत्तरीय शाखा
(2) वाजसनेयी शाखा
इनका संबंध मुख्यतः कर्मकाण्ड से है।

**औषधि सूक्तः** यजुर्वेद में औषधियों के लिये अनेक मंत्र मिलते हैं जिससे स्पष्ट है कि औषधियों का उपयोग यज्ञ कर्म तथा स्वास्थ्य के लिये विशेष होता था। इसमें औषधियों की अनेक प्रार्थनाएं की गयी थी जैसे– इसमें औषधियों जो तीन युगों से पहले उत्पन्न हुई उन भरण पोषण करने वाली औषधियों के अनेक स्थान है, माता औषधियों? तुम्हारे अपरिचित जन्म स्थान है तुम्हारे कर्म भी असंख्य है इसलिये तुम मुझ को भी रोग रहित करो।
यजुर्वेद का यह भी उपदेश है कि औषधियों को केवल नाम या रूप से जानने का कोई महत्व नहीं है नाम और रूप से तो औषधियों को जंगल में गाय, भेड़ चराने वाले चरवाहे भी जानते हैं परन्तु इनका उपयोग गुण दोष के अनुसार जो जानता है वही सच्चा चिकित्सक है। यजुर्वेद में दिव्य वैद्य का लक्षण बताया गया है कि जो रोगों को जड़ से उखाड़ देता है राक्षसो (जीवाणुओं) को मार सकता है वही दिव्य भिषक है।
कम न होने, सदा बढ़ने वाले रोग वीजो को नष्ट भ्रष्ट करने वाला और सब प्रकार के राक्षसों (जीवाणुओं) को अधोमार्ग से निकालने वाला उपदेशक प्रथम दिव्य वैद्य है।
(यजु0 16/5)

**(4) अथर्ववेद में आयुर्वेदः** आयुर्वेद चिकित्सा मुख्य रूप से अथर्ववेद में वर्णित है।

**कृमि विज्ञानः** अथर्ववेद में विभिनन प्रकार के अनेक कृमियों की जातियां हैं उनसे होने वाले रोग तथा उनको नष्ट करने का उपाय बताया गया है। जैसे– अन्त्र कृमि सिर पृष्ट अन्न षानदि से प्रविष्ट होने वाले कृमि आदि को मारने के लिये प्रार्थनायें एवं उपाय बताये गये हैं।

**अथर्ववेद में वनस्पतियांः** इसमें कुछ वनस्पतियों का नाम भी उल्लिखित है जैसे– पिप्पली, आपामार्ग, प्रश्निपर्णी मांस रोहिणी आदि आपामार्ग का विशिष्ट वर्णन है। इसको देहात में चिरचिटा या ओंधा कहते हैं। इसका विशेष गुण है कि शिरोविरेचनीय द्रव्यों में अत्रिपुत्र ने आपामार्ग को ही श्रेष्ठ बताया है। पुत्रोत्पत्ति के लिये भी आपामार्ग का उपयोग आयुर्वेद ग्रंथों में मिलता है। रोगों में किलास, कुष्ठ रोग नाशक उपाय, केश बढ़ाने का उपाय, क्लीबत्व नाशक उपाय, हृदय रोग, कामला, मूढ गर्म अश्मरी मूत्राघात आदि रोगों की चिकित्सा का वर्णन विशेष रूप से है।

**वनस्पतियों में सौरजगत प्रभावः** सूर्य, जल, वायवः औषधीनामुत्पतेर्मूल कारक तत्वानि सन्ति। सूर्य ज्योतिरभावे वनस्पतिषु क्लोरोसियेसिस अर्थात क्लोरोफिल, यत् वैदिक साहित्ये हरीतिमा कथिताऽस्ति। अस्य निर्माणं भवितुम न शक्यते। वनस्पतिनाम विशिष्टतापमानस्यावश्यकता भवति यत् भानोः प्राप्तं भवति। तथैव जलेन बिना वनस्पतीनाम जीवनं अशक्यं वर्तते।
(अथर्ववेद) 1/33/1
अथर्ववेद में वनस्पतियों का नामकरण उनके स्वरूप, गुण और धर्म के आधार पर किया गया है जैसे प्रश्निपर्णी (कुर्बरपणयुक्ता) असिकनी (नीलवर्णयुता) कृष्णा (कृष्णवर्णा)। बहुत सी औषधियों का ज्ञान पशु पक्षियों की सहायता से प्राप्त हुए हैं तथा उन औषधियों के नाम भी उनके अनुसार रखे गये हैं जैसे– वाराही, सर्पगन्धा, नाकुली, गन्धर्वहस्ता, हंसपदी, अश्ववारा, अजभृड.गी।
पर्णम– उत्तानपर्ण पर्ण, प्रश्निपर्णी, शालपर्णी
फलम– फलवती
पुष्पम– हिरण्यपुष्पी, विषपुष्पी, शंखपुष्पी।
कन्द– विषकन्द, वराहकन्द
रूपम्– अर्जुनः पीतदारू, शुभ्रा, रक्तपुष्पा, श्वेतपुष्पा।
गन्धम्– अश्वगन्धा, सर्पगन्धा, सुगन्धा
आकार भेद– वृक्ष, तरू, तृण, लता, अन्नवती, पल्लवती, फलवती, पर्णहीना, कन्द युक्ता।
अथर्ववेद में औषधियों के पूर्णतः परिपाक के लिये सूर्य, पृथ्वी और जल का महत्व बताया गया है।
जैसे– यासां द्यौ पिता पृथिवा माता, समुद्रो मूलं वीरूधां वभूव।
तास्त्वां पुत्राविधाय दैवी प्रावन्त्वौषधयः।।
(अथर्ववेद–3/33/6)
अथर्ववेद में विविध गुण युक्त जलों का औषध रूप में वर्णन है। इन जलों से भोजन आदि बनाने से औषध रूप रोग निवारण क्रिया सम्पादन करते हैं।
अथर्ववेद में विष के प्रयोग के लिये विविध कल्पों का उल्लेख है। विष पदार्थ को पीसकर कल्प रूप में उसका प्रयोग होता है। अथर्ववेद में औक्ष नामक पदार्थ का प्रयोग दूध निर्मित खाद्य पदार्थ के निर्माण के लिये कहा गया है– अथर्ववेद 2/36/6
अथर्ववेद में मानव अवयव धातुओं की तुलना वनस्पतियों और वृक्षों के साथ की गयी है।
जैसेः–

| | |
|---|---|
| पुरूषः | वनस्पति |
| लोमः | पर्णन् |
| त्वक् | वहिरूत्पाटिका |
| रक्तम् | निर्यास |
| मासम् | शर्करा |
| स्नायु | किनाटः |
| अस्थि | आभ्यान्तरकाष्ठम् |
| मज्जा | मज्जा |

इसी प्रकार विविध रोगों के नाम तथा उनको पूरा करने का उपाय विस्तार से लिखा गया है। शरीर के अंगो का वर्णन, रक्त संचारादि क्रियाओं का भी उल्लेख है।

**अथर्व चिकित्साः** अथर्व ऋषि ने कहा है कि यह चिकित्सा चार प्रकार की होती है।
(1) आथर्वणा– इसमें आथर्वणी का जप, होम दान से संबंध है।
(2) आंगिरसी चिकित्सा– मानसिक शक्ति से संबंध है।
(3) दैवी चिकित्सा– वायु, जल, पृथ्वी आदि से संबंध रखती है।
(4) मानवी चिकित्सा– यह चिकित्सा औषधियों से संबंधित है।
यह चिकित्सा जब तक शरीर में प्राण होते हैं तभी तक सफल होते हैं।

आथर्वणी राडिग रसीदैवी मनुष्यजा उत।
ओषधयः प्रजायन्ते यदा त्वं प्राण जिन्वसि।।

(अथर्ववेद)
अर्थात– हे प्राण। जब तक तुम प्रेरणा करते हो तब तक आथर्वणी, आडि.गरसी दैवी और मनुष्यकृत औषधियां सफल होती है। अथर्ववेद में वात, पित्त, कफ का भी विस्तार से भेदों सहित वर्णन किया गया है।

**(5) रामायण काल में आयुर्वेदः** रामायण संस्कृत का आदि काव्य कहा जाता है। आयुर्वेद (प्राचीन चिकित्सा पद्धति) आयुर्वेद द्वारा ही सुशेन वैद्य ने मूर्छा युक्त लक्ष्मण की चिकित्सा की थी क्योंकि रामायण महाकाव्य में उपनिषद, दर्शन, स्मृति, ज्योतिष, धनुर्वेद, आयुर्वेद एवं उससे सम्बद्ध उपयोगी विषय उपस्थित हैं।
जैसा कि रामायण में विदित है–

अनिर्वेदः श्रियो मूलमनिर्वेदः परं सुखम्।
अनिर्वेदो हि सततं सर्वार्थेषु प्रवर्तकः।।

(सुन्दर काण्ड सर्ग–12)
रामायण में तैल भोणी तथा वनस्पतियों का वर्णन आया है। भारतीय प्रथा में वस्तुओं को सुरक्षित रखने का उपाय तैल और मधु है। राजा दशरथ का शव भी भरत के आने तक तैल में ही सुरक्षित रखा गया था।

(वा0रा0 अयो0)
वनस्पतियों में कुटज, अर्जुन, सर्ज नीम, सप्तच्छद, अशोक, कोविदार आदि प्राचीन नाम रामायण में मिलते हैं। आसव तथा मधुशाला रामायण में रावण की मधुशाला का वर्णन है। मधुशाला का वर्णन अष्टाडंग संग्रह में भी है इसमें मद्य और मांस का संबंध भी बताया गया है।

**(6) महाभारत काल में आयुर्वेदः** महाभारत में अश्विनौ का उल्लेख है, आयुर्वेद के आठ अंगो का वर्णन है जैसे– शल्य, शालाक्य, कायचिकित्सा, कौमारभृत्य भूतविद्या, रसायन वाजीकरण, विषतन्त्र विस्तार से है। दुर्योधन ने भीम को विष दे दिया था उससे मूर्छित होकर भीम नदी में गिर गया वहां सापों ने उसे काटा जिससे उसका विष नष्ट हो गया। इस प्रकार महाभारत में स्थावर विष को जड़.गम विष नष्ट करता है ये उल्लेख है।

**(7) उपनिषदों में आयुर्वेदः** उपनिषदों का अर्थ है समीप बैठकर ज्ञान प्राप्त करना। मुण्डक उपनिषद में कहा गया है कि गुरू के पास हाथों में समिधा लेकर पहुंचे तब गुरु उनको ब्रहम ज्ञान देता है। उपनिषदों का मुख्य विषय ब्रहम ज्ञान ही है जैसे सन्नत कुमार के पास जाकर नारद का ज्ञान प्राप्त करना, प्रजापति के पास इन्द्र तथा विरोचन का जाना, जनक का बहुदक्षिणा वाले यज्ञ में सर्वश्रेष्ठ ब्रहमज्ञानी का पता लगाना चाहिये।

ब्रहमज्ञान का आधार शरीर है इसलिये शरीर धारण करने वाले अन्न के संबंध में एक सुन्दर उल्लेख है–

अन्नं न निन्घात तदब्रतम। प्राणो अन्नं।
शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः शरीरे प्राणः प्रेतिष्ठित
शरीरे प्राणः प्रैतिष्ठितः।।
(तैतरीय उपनिषद)

अत्रि पुत्र ने अन्न पाचन के संबंध में इस से गुड़ बनाने की प्रक्रिया से संबंध बताया है। इसी प्रकार स्थूल, सूक्ष्म, अति सूक्ष्म तीन प्रकार से अन्न का पाचन भी होता है तथा अंत में रस और किट्ट दो भागों में विभक्त हो जाता है।

**पामा रोगः** छान्दोग्य उपनिषद में रैक्व की कथा है। जानश्रुति रैक्व के पास ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से जाता है। रैक्व ने इसको पामा रोग से ग्रस्त देखा। पामा कुष्ठ का एक भेद है।

**घोड़े का सिर लगानाः** आथर्वण ऋषि ने मधु विद्या का उपदेश अश्विनौ को दिया। अश्विनौ ने दधीचि को दिया। इस उपदेश परम्परा में एक कथा है कि आथर्वण ने यह विद्या अपने मुख से नहीं दी थी क्योंकि आथर्वण को कहा गया था कि इस विद्या को यदि तुम उपदेश करोगे तो तुम्हारा सिर गिर जायेगा। इसलिये अश्विनौ ने आथर्वण का सिर काटकर घोड़े का सिर जोड़ दिया था उपदेश के पश्चात वह सिर गिर पड़ा फिर अश्विनौ ने उनका असली सिर जोड़ दिया। यज्ञ का सिर भी अश्विनौ ने ही जोड़ा था।

अश्विनौ देवभिषजौ यज्ञवाहाविति स्मृतौ।
यज्ञस्य हि शिरश्छिन्नं पुनस्ताभ्यां समाहितम्।।

(चरक)

**अर्थात**
अश्विनी कुमार देवताओं के भिषज हैं वे यज्ञवाह कहलाते हैं। यज्ञ पुरूष का कटा हुआ सिर उन्होंने जोड़ दिया। चरक संहिता में भिन्न–2 परिषदों का वर्णन भी उपनिषदों में मिलता है। किसी विषय का निर्णय करने के लिये उपनिषद काल में भी परिषदें बुलाई जाती थी।

**(8) स्मृति और पुराणों में आयुर्वेद साहित्यः** चिकित्सा के इतिहास की दृष्टि से इनका महत्व है जैसे गरूण पुराण में कई श्लोक चरक, सुश्रुत से संग्रहीत है। ब्रहमवेवर्तपुराण ब्रहम खण्ड में आयुर्वेद की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है। जैसे– ब्रहमा ने आयुर्वेद का ज्ञान भास्कर को दिया। भास्कर ने अपने 16 शिष्यों को आयुर्वेद पढ़ाया उन्होंने स्वतंत्र ग्रन्थ बनाये। अग्नि पुराण में सिद्धौषध सर्वरोग हर औषध, वृक्षायुर्वेद मृत संजीवनी योग आदि है। धातुओं का भस्म के रूप में उपयोग भी अग्नि पुराण में मिलता है।
विष्णु पुराण में कहा गया है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने आवश्यकता के अनुसार न्यूनाधिक भोजन जरूर करें किन्तु भोजन के अंत में पेट में कुछ खाली स्थान जरूर रखें।

**जैसे–**
जठरं पूरयेदर्धमन्नैर्भागं जलेन च।
वायोः सञ्च्चरणार्थाय चतुर्थमवशेषयेत्।। (विष्णुपुराण)
अर्थात–

ठोस अन्न से जठर का आधा और जल (तथा पेयों) से चौथाई भाग भर दिया जाये और वायु रूप द्रव्यों के संचरण के लिये चौथाई भाग खाली रखा जाये।

**(9) पाणिनीय व्याकरण में आयुर्वेद साहित्यः** इसमें कुछ शब्द ऐसे हैं जिनसे आयुर्वेद साहित्य का पता चलता है जैसे रोगों के नाम आदि। चरक संहिता में आये जनपद आदि शब्दों का अर्थ पाणिनीय व्याकरण से ज्ञात होता है। सूत्रकाल में भारत अनेक जनपदों में विभक्त था। काशिकर कार में ग्रामों के समुदाय को जनपद कहा है।

पाणिनी ने चरक के अनुसार शिष्य तीन प्रकार के बताये हैं माणव, अन्तेवासी और चरक (बिना उपनयन के वाद, चलने फिरने वाले) अष्टाध्यायी में कुछ रोगों के नाम मिलते हैं जैसे–

सिध्मादिम्यश्च से सिध्मलः अर्शाः
आदिम्योडच् से अर्शसः लोमादि पामादि

पिच्छादिम्यः, शनेलच से पामनः शब्द बनता है। इसके अविस्कि रोगों के नाम भी सिद्ध किये गये हैं। जैसे– प्रवाहिकातः कासनः छर्दिकातः तथा विषज्वर के लिये द्वितीयकः चतुर्थकः आदि भी हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि संस्कृत वाङ्गय में मानव जीवन से सम्बन्धित स्वास्थ्य के हर पहलू का वर्णन मिलता है किन्तु अथर्ववेद का उपवेद होने के कारण आयुर्वेद का वर्णन विस्तृत रूप से अथर्ववेद में है अन्य में आयुर्वेद के विचारों की उपयोगिता अवश्य दिखती है।